उच्च शिक्षा में कार्पोरेट का सामाजिक दायित्व

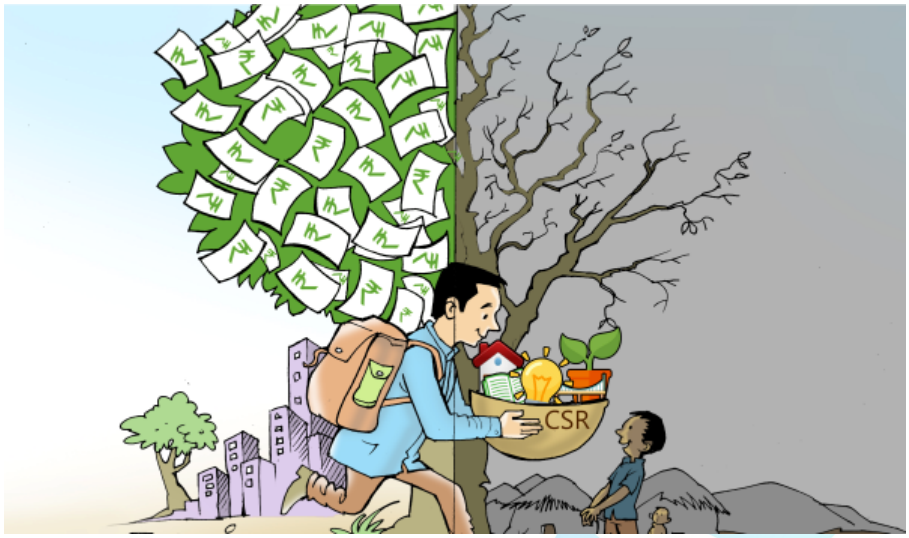

भारत में उच्च शिक्षा की स्थिति दयनीय है। सरकार इस दिशा में लगातार प्रयासरत है। हाल ही में विश्व अनुदान आयोग और अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद् (ए.आई.सी.टी.ई.) के स्थान पर एक नियामक संस्था लाने का प्रस्ताव भी रखा गया था। परंतु उसे अभी रोक दिया गया है। सरकार के इन प्रयासों के साथ अगर व्यक्तिगत, संस्थागत और कार्पोरेट स्तर पर उच्च शिक्षा संस्थानों की मदद की जाए, तो सोने में सुहागा हो जाएगा।

कार्पोरेट सोशल रेस्पॉन्सिबिलिटी (सी.एस.आर) को व्यवहार में लाने के लिए 2013 में कंपनी अधिनियम लाया गया था। इसका उद्देश्य कानूनी और नीतिगत रूप से व्यापार जगत और समाज को जोड़ना था। दुर्भाग्य की बात है कि यह अधिनियम कारगर सिद्ध नहीं हुआ है।

- ✓ कार्पोरेट मामलों के मंत्रालय से पता चलता है कि वित्तीय वर्ष 2015-16 में अपनी वार्षिक रिपोर्ट जमा करने वाली 5,097 कंपनियों में से केवल 3,118 कंपनियों ने ही सी एस आर में अपना कुछ योगदान दिया है। ऐसा लगता है कि कंपनियों ने इस प्रकार के योगदान को केवल दान से जोड़कर देखा है। वे इस अभियान के मूल उद्देश्य को ही नहीं समझ पाई हैं।

भारत में निजी और सार्वजनिक विश्वविद्यालयों की माली हालत ठीक नहीं है। उन्हें वित्तीय सहायता की अत्यधिक आवश्यकता है। इसी के दम पर वे विश्वस्तरीय शिक्षकों का वेतन भार वहन कर सकेंगे, अनुसंधान केंद्र विकसित कर सकेंगे, शोध एवं अनुसंधान को बढ़ावा दे सकेंगे और शिक्षकों व विद्यार्थियों के असाधारण कार्यों के लिए प्रोत्साहन राशि दे सकेंगे।

- ✓ विश्वविद्यालयों के स्तर को उठाने के लिए सरकार ने नियमन, मान्यता, रैंकिंग, स्वायत्तता और अंतरराष्ट्रीयकरण जैसे पाँच मुख्य क्षेत्रों में सुधार किए हैं। शिक्षा संस्थानों को विश्व स्तरीय बनाने में सबसे बड़ी बाधा निधि की है।

प्रत्येक वर्ष, शिक्षाविद यही मांग करते हैं कि उच्च शिक्षा के लिए धनराशि बढ़ाई जाए। इस क्षेत्र में सरकार द्वारा एक न्यूनतम वृद्धि किए जाने से बात नहीं बनेगी। वृहद् स्तर पर ऋण, अनुदान और लोक-कल्याण की भावना से मिला दान ही कोई परिवर्तन ला सकता है। बैंक और अन्य वित्तीय संस्थाएं तो उच्च शिक्षा के क्षेत्र में वित्तीय सहायता देने से बचते रहे हैं। अतः एक ऐसी नीति का निर्माण होना चाहिए, जहाँ विश्वविद्यालयों और उससे जुड़ी वित्तीय सहायता को प्राथमिकता वाला क्षेत्र माना जाए।

- ✓ राज्यों में स्थित विश्वविद्यालय एवं अन्य उच्च शिक्षा संस्थानों की हालत तो बहुत ही खराब है। यद्यपि केंद्रीय विश्वविद्यालय अपेक्षाकृत ठीक हैं, लेकिन यहाँ की जटिल प्रक्रियाएं, नियमन बाधाएं तथा निधि की अदायगी में निरंतर देरी के कारण इन संस्थानों को अपनी जरूरतों और प्राथमिकताओं के अनुसार धन नहीं मिल पाता। दूसरे, उन्हें उस राशि को अपने अनुसार खर्च करने की भी स्वतंत्रता नहीं है।
- ✓ उच्च शिक्षा को निजी क्षेत्र के लिए खोल दिए जाने से समस्या और बढ़ गई है। मझोले दर्जे के निजी उच्च शिक्षा संस्थान बहुत अधिक संख्या में खुल गए हैं। इन निजी संस्थानों को शिक्षा के आदर्श और मूल्यों से कोई सरोकार नहीं होता। ये तो महज लाभ कमाने के उद्देश्य से खोले जाते हैं।

सरकार ने देश के 20 शिक्षा संस्थानों को चुनकर उन्हें विश्वस्तरीय बनाने हेतु 'प्रतिष्ठित संस्थानों' की बात कही है। सरकार इन्हें पूर्ण स्वायत्तता देना चाहती है। इनकी चयन समिति में शिक्षाविद्, उद्योगपति और दूसरे प्रतिष्ठित लोग होंगे। इन संस्थानों में दस पब्लिक सेक्टर और 10 प्राइवेट सेक्टर के होने का अनुमान है। सरकार का यह सपना पारदर्शिता के अभाव में लटका हुआ है।

भारतीय विश्वविद्यालयों को एक सशक्त नेतृत्व की तुरंत आवश्यकता है। यह नेतृत्व ऐसा हो, जो प्रतिष्ठित संस्थानों की शीघ्र स्थापना में आने वाले अवरोधों को दूर कर सके।

'द हिंदू' में प्रकाशित सी. राजकुमार के लेख पर आधारित। 16 जुलाई, 2018